

पुराने माल के शौकीन इधर तशरीफ लाएं....

के. पी. सक्सेना

विस्तार

ये रचना मशहूर व्यंग्यकार के. पी. सक्सेना ने सितंबर 2013 को लिखी थी। उनकी इस रचना को बहुत पसंद किया गया, हमारी कोशिश है कि देश के मशहूर व्यंग्यकारों की रचनाओं से देश के युवाओं को रूबरू कराया जाए।

चुनांचे अर्ज कर दूं कि सन 1975 से 2000 तक 25 साल तक हिंदी कवि सम्मेलनों के मंच पर रहा। कविता एक न लिखी, गद्य (प्रोज) हास्य व्यंग्य पढ़ता रहा। मैं और स्व. शरद जोशी, दो ही थे जो कवियों पर भारी पड़ते थे। मेरी एक रचना 'पुराने माल के शौकीन' देश और विदेशों में बेहद चर्चित हुई। इसमें एक नौजवान पुराने माल का इतना शौकीन था कि विवाह में वरमाला दुल्हन के बजाय उसकी नानी के गले में डाल दी। मैं तो रचना तक रह गया, मगर मेरा पुराना लखनऊ पुराने माल का शौकीन रहा। पुरानी सेकंड हैंड चीजें। आर्ट पीसेज और एंटीक। एकमात्र बाजार था नक्खास...। हर इतवार सुबह नौ से रात गए तक कद्रदानों की भीड़। यादगार चीजें कौड़ियों के मोल।

मिसाल के तौर पर (कोई 50 साल पहले) मेरे पड़ोसी जनाब अली अब्बास हुसेनी का बूढ़ा नौकर (खुद अनपढ़) नक्खास से किताबों के ढेर से दो आने में एक पीली पड़ चुकी फटी-पुरानी किताब खरीद लाया। हुसेनी साहब ने किताब देखी तो चौंक पड़े। सन 1860 में मीर सगीर द्वारा लिखी गई किताब 'खुशबू-ए-गुलबदन गुलनार... एक काल्पनिक इश्किया नाँवेल। इतनी दुर्लभ कि लोग सैकड़ों खर्च करने को तैयार। किताब महफूज रखकर हुसेनी साहब ने नौकर हाफिज को एक रुपया इनाम दिया। मैंने पढ़ी।

सुभानअल्लाह... क्या भाषा थी।

तब नक्खास लखनऊ का पुराना खजाना हुआ करता था। मैं हर इतवार को पुरानी किताबों की तलाश में जाता था। पतरस बुखारी, हजरत आवारा, शौकत थानवी, वड्सवर्थ, बायरन, फसाना-ए-आजाद मैंने यहीं

ढेर से खरीदा रुपये-आठ आने में। किताबों के अलावा रंगीन परिंदे, पुरानी कीमती पोशाकें, टोपियां, जूतियां, लहंगे, तलवार, खंजर, कांच के फूलदार बर्तन, चाय का सेट, मर्तबान, हुक्के, पानदान, बर्तन-भांडे, दरियां, पुराने कालीन व गाव-तकिये...सब कुछ उपलब्ध हुआ करता था। दो अंग्रेज लेडीज यहां की रेगुलर कस्टमर थीं। हर इतवार चर्च के बाद सीधे नक्खास आतीं... एंटीक चीजें खरीदनें।

एक दिन तो मेरे देखते-देखते हृद हो गई। एक साहब अपनी बेहद पुरानी खुली खटारा कार दो नौकरों से धकेलवा कर लाए। कार पर उर्दू में लेबल लगा था, बराए फरोख्त (फॉर सेल)। कार का कोई हिस्सा काम नहीं करता था। एक साहब ने 140 रुपये में खरीद ली। रंग-रोगन करके दरवाजे पर रोब मारेगी। नक्खास के एक बुजुर्ग शैदाई बोले-‘मियां, पुराने मां-बाप को छोड़कर यहां हर पुरानी उम्दा चीज बिकने आती हैं। एक पुरानी शानदार शेरवानी में एक बड़ा सा छेद देखकर ग्राहक बिगड़ गया। दुकानदार बोला-‘हुजूर यह हजरतगंज नहीं, नक्खास है। यहां पुरानी इस्तेमालशुदा चीजें ही बिकती हैं।’

कांच का एक बेहतरीन खुशनुमा लैंप जिस पर उम्दा रंगीन कलाकारी की गई थी, मुझे बहुत पसंद था। ग्यारह रुपये में मिल रहा था। पैसे भी मेरे पास थे, पर मां के डर से नहीं लिया वे नहीं चाहती थीं कि किसी के घर की इस्तेमालशुदा पुरानी चीज हमारे घर में रखी जाए। पुरानी किताबों के विक्रेता नबीउल्ला ने मुझे बताया कि महीने में एक बार किसी इतवार को एक सज्जन आते हैं जो पूरे पैसे देकर पिंजरों में बंद सारे रंगीन पक्षी उड़वा देते हैं। सारे पिंजरे खाली। उनका कहना था कि बंद करके रखना बेजबान परिंदों पर जुल्म करना है। हुसेनी साहब जुबली कॉलेज के प्रधानाचार्य पद से रिटायर हो चुके थे। अंग्रेजी का अच्छा अध्ययन था। उन्होंने बताया कि नक्खास के बाजार पर एक अंग्रेज एंड्रयू ग्राफ ने एक किताब लिखी-‘ए सर्वे ऑफ जंकयार्ड जो काफी चली और पुराने माल के बाजार के प्रति लोगों का आकर्षण बढ़ा।

जरूरत आदमी को कितना मजबूर कर देती है। एक साहब चांदी के बेहतरीन कलमदान इसी बाजार में औने-पौने बेच गए। इस कलमदान पर गाढ़ी काली रोशनाई से मशहूर शायर ‘जोश मलीहाबादी के दस्तखत थे। इसे गीतकार शैलेंद्र (तब लखनऊ में) ने खरीदा। शैलेंद्र से मेरी खासी जान-पहचान थी। बंबई में यह कलमदान मैंने शैलेंद्र के कमरे में देखा। जोश साहब के दस्तखत मिट चुके थे। नवाबी के बुरे दिनों में घर की बेगमें खर्च चलाने को पुरानी चीजें और बर्तन-भांडे नौकरानियों के हाथ नक्खास में बिकवा दिया करती थीं। ब्रिटिश राज में इसी शहर में अंग्रेजों के बड़े-बड़े बंगलों में बड़े कमरे। कांच की अलमारियों में यादगार पुराना माल करीने से सजा रहता था। भारत छोड़ने से पहले एक-एक नमूना अपने देश भेज दिया। सन् 50-51 के पास नक्खास से कुछ पहले मोहल्ला यहियागंज में पं. कक्कू जी नाम के एक बुजुर्ग रहा करते थे। इनका धंधा नाटकों के लिए हर तरह की ड्रेसें और सामान किराए पर सप्लाई करना था। ढाल, तीर, तलवार, बल्लम, खंजर, नकली बंदूकें-पिस्तौलें, नकली जेवरात, दाढ़ी-मूंछ, जटाएं, तरह-तरह की पगडियां, ताज वगैरह। नाट्यकर्मियों की भीड़ लगी रहती थी

उनकी छत पर। इन सामानों के लिए कक्कू जी भी नक्खास पर निर्भर थे। मंच की सजावट का एक से एक नमूना था कक्कू जी के पास। कुछ दिनों तक पुराने नाटकों की स्क्रिप्टें भी मिलती रहीं उनके यहां।

अब न कक्कू जी रहे, न तीर-तलवार वाले नाटक। मकानों की तरह दिल भी छोटे होते गए। अपने रहने का ठौर नहीं, पुराना माल कहां रखें। यों भी फ्लैटों के नए कमरों में बुजुर्गों की ब्लैक एंड व्हाइट तस्वीरें कौन टांगता है। नक्खास उजड़ता गया। रेडीमेड कपड़े, जूते बिकने लगे। शायद कभी पिंजरों में रंगीन पक्षी बिकने आ जाते हों, उधर से गुजरने वाले पुराने लोग ठंडी सांस भर कर यही कहते हों- जरा उम्मे रफता (बीते दिन) को आवाज देना।